

मँगल

सन्तो दिशन्ति चक्षूंषि बहर्किः समुत्थितः ।

देवता बान्धवाः सन्तः सन्त आत्माहमेव च ॥

‘जैसे सूर्य उदित होकर बाहर की वस्तुओं के दर्शन की शक्ति देता है वैसे ही सन्त पुरुष प्रकट होकर अन्तर्दृष्टि प्रदान करते हैं । सन्त ही देवता एवं बन्धु-बान्धव हैं । सन्त ही आत्मा हैं और सन्त ही वस्तुतः मेरे स्वरूप हैं ।’

भगवान् श्रीकृष्ण

ॐ

ॐ तत् सत्

॥ श्री सद्गुरु प्रसाद ॥

॥ श्री अयोध्याधिपतये नमः ॥

श्रीभक्तकोकिल

भक्त का हृदय ही भगवान की क्रीड़ा स्थली है । वह भगवान् की इच्छामूर्ति है । वे चाहे जब, जहाँ, जैसे, जिस रूपमें सजा-सँवारकर उसमें क्रीड़ा करते हैं । उसकी वेश-भूषा, जाति, आकृति-नाम, रहन-सहन, आचार-विचार, गुण-भाव, सब प्रभुकी इच्छा के अनुसार होते हैं और वे अदल-बदल के, उलट-पलट के जैसी मौज होती है, वैसे ही उसके साथ खेलते हैं, वे अपनी क्रीड़ा के लिये भक्त के हृदय को मिट्टी, पानी, हीरा, मोती, लता, वृक्ष, कीट-पतंग, पशु-पक्षी, बालक-युवा, स्त्री-पुरुष, बच्ची-बुढ़िया, सब कुछ बना देते हैं । और उसको निमित्त बनाकर हँसते, खेलते और खुश होते हैं । उसको वे सम्पूर्ण रूप से अपना लेते हैं और जैसे खिलाड़ी नरम माटी को, मखन के लोंदे को चाहे जैसा आड़ा-टेढ़ा, लम्बा-चौड़ा, खूबसूरत, बदसरत खिलौने के

रूप में बनाता है, माटी अथवा माखन का लोंदा खिलाड़ी के हाथमें सर्वथा समर्पित रहता है । ऐसी भक्त की स्थिति होती है । भक्ति-सिद्धान्त में भक्तकी यही सिद्ध अवस्था है । नित्यसिद्ध पुरुषों में यह स्वभाव से रहती है और साधन-सिद्ध पुरुषों को भगवत्कृपा से प्राप्त होती है । नवधा भक्ति में आत्मनिवेदन नाम की अन्तिम भक्ति की पूर्णता-सम्पूर्ण समर्पण अथवा मधुर रस की परिणति यही है ।

श्री हरि

श्रीभक्त कोकिल रचित “श्रीवैकुण्ठेश्वर वास भवन”

ग्रन्थ का कुछ अंश

॥ श्री लक्ष्मीनारायण सम्वाद ॥

एको ओंकार सत्गुरुप्रसाद

ॐ तत्सत् श्री अयोध्याधिपत्ये नमः

श्री वेदवती स्नुषा, महाभागा कौशिल्या की गोद में शील संयुक्ति विराजती हुई, सुहागिनी सखियोंकर मंगल गीत औं रक्षालोंकर अभिषेक्ति हुई, राजकुमार रामचन्द्र के सेवा में उत्सुकता करती हुई का सर्वदा मंगल हो ॥२६॥

मिश्री मिले हुए सुगन्धित दूध के समान गृहलक्ष्मी मैथिलीदेवी, अलोकिक सनेह सौन्दर्य और पवित्रता से, थोड़े ही दिनों में स्वर्ग कैलाश वैकुण्ठ से अधिक सारा राजगृह शोभित किया, क्योंकि उस वेदपुत्री के पद रज में श्रृंगार वात्सल्य और करुणारस चरण उठाने में टपकता था । यहां तक श्री विदेहराज दुहिता ने सामाजिक रहस्यालय में पर्दापण किया, जब कभी स्नान के लिये प्रहर भर राजमहल से फूल वाटिका में जाती हुई, मंजीर नूपर की ध्वनि सुनि कोकिल कीर भ्रमर मृगीगण जहँ तहँ से उठि आवत है । मृगियों के बच्चे तो पद अँगुलियों में हरितमाणिक्य की सबीज किरनाओं को हरे-हरे घास की नाई निरख पद पंकज को चूमत है, सखी हँसत है ॥३०॥